International Journal of Creative Research Thoughts
Volume 2, Issue.2, Feb 2014
ISSN:-2320-2882

ORIGINAL ARTICLE

"भ्रष्टाचार की समस्याः गॉधीवादी समाधान"

डॉ. जितेन्द्र शर्मा

एसोसियेट प्रोफेसर–दर्शनशास्त्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट,
जला–सतना (म.प्र.)

आलेख–सार

"प्रस्तुत शोध आलेख में राष्ट्र के समक्ष विद्यमान आर्थिक भ्रष्टाचार की समस्या तथा उसके गांधीवादी समाधान पर समीक्षात्मक गवेषणा प्रस्तुत की गयी है। अधुना भोगवाद के कारण अहर्निश वृद्धिंगत हो रहा भोग–वासनाओं का ज्वार सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार का मूल कारण है। आज भोग के प्रचण्ड दावानल में झुलस रहा मनुष्य मन की चंचलवृत्तियों का दास हो गया है। जब तक मन की चंचलवृत्तियों पर अंकुश नहीं लगाया जाता तब तक भ्रष्टाचार की समस्या का पूर्ण समाधान संभव नहीं। जोर–जबरदस्ती या मात्र नियम–कानून बनाने से ही काम नहीं बनेगा बल्कि इस हेतु समूह मन को बदलना होगा। मनुष्य को उसके आध्यात्मिक स्वरूप का अभिज्ञान कराना होगा। 'स्वमहिम्निप्रतिि ठतः' के वेदान्तीय आदर्श की पुनर्प्रतिष्ठा करनी होगी सार्वजनिक जीवन में।

अपरिग्रह और अस्तेय वे दो महामन्त्र हैं, जिनको व्यवहृत कर भ्रष्टाचार की धूमाग्नि का सदा सर्वदा के लिये शमन किया जा सकता है। आवश्यकताओं का नियमन अथवा आवश्यकताओं को कम करने का दर्शन वह महामन्त्र है जिसको अंगीकृत एवं आत्मार्पित करके न केवल सार्वजनिक जीवन में शुचिता और शान्ति की सरिता प्रवाहित की जा सकती है बल्कि प्रेम, करूणा और उदारता पर आधारित परस्परपूरकतामूलक एवं समतामूलक समाज की स्थापना भी की जा सकती है। परन्तु ऐसे आदर्श समाज की स्थापना हिंसा के द्वारा संभव नहीं है। इसके लिये आवश्यकता है अहिंसक क्रान्ति की। हृदय परिवर्तन और ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को आचरण में उतारने की। इसके लिये बीड़ा उठाना होगा समाज के नेतृत्वकर्ता–दार्शनिक, शिक्षक, राजनेताओं, धर्माचार्यों एवं समाज सेवियों को। भोगवाद की पंकिल गलियों से निकलकर प्रस्तुत करना होगा जन सामान्य के समक्ष त्याग एवं आदर्श का सदाचरण।"

बापू के सपनों का भारत, विश्व को शान्ति, सौहार्द्र एवं *सन्तोषं परमं सुखम्* का पाठ पढ़ाने वाला भारत आज आर्थिक भ्रष्टाचार में आकंठ डूब चुका है। देश के वर्तमान आर्थिक परिदृश्य का खाका प्रस्तुत करते हुये एक प्रतिष्ठित पत्रिका का सम्पादक लिखता है– ''हम भ्रष्टन के, भ्रष्ट हमारे''। अच्छा नहीं लगता कि नये वर्ष का शुभारंभ घोटालों, भ्रष्टाचार की चर्चा से किया जाय पर वास्तविकता नकारी भी तो नहीं जा सकती। हकीकत यही है कि आजादी के बाद की एक सर्वाधिक त्रासदी भरी अवधि से गुजर रहे हैं हम। 178 भ्रष्ट देशों में भारत की रैंकिंग 87 वीं है। विगत वर्ष हम 84 वें स्थान पर थे। कम से कम से अधिक की ओर बढ़ती यह रैंकिंग 'ट्रांसपेरेन्सी इन्टरनेशनल' नामक स्वैच्छिक संस्था ने बनायी है। भ्रष्टाचार ने अब एक उद्योग का रूप ले लिया है।[1]

"घोटालों से घिरी सरकार के नौ वर्ष" शीर्षक से प्रतिष्ठित समाचार पत्र का निम्न सम्पादकीय लेख देश की भ्रष्टाचार में कंठगत डूबी विधायिका और कार्यपालिका के वर्तमान चरित्र को ही नहीं उजागर करता है बल्कि भ्रष्टाचार से लड़ने की राष्ट्रीय नेतृत्व की निर्वीर्यता और कापुरूषता को भी द्योतित करता है– "संप्रग का पहला कार्यकाल सांसदों की खरीद–फरोख्त से पूरा हुआ और दूसरा कार्यकाल पूरा करने का श्रेय सी0बी0आई0 को जाना चाहिये। यूपीए सरकार के नाम घोटाले की लम्बी फेहरिस्त है। संप्रग का दूसरा कार्यकाल भ्र टाचार ही नहीं संवैधानिक संस्थाओं के मान–मर्दन के रूप में भी याद किया जायेगा। कामनवेल्थ गेम्स घोटाला, टू जी स्पेक्ट्रम घोटाला, हेलीकाप्टर घोटाला, कोयला आवंटन घोटाला, तेल के बढ़ले अनाज घोटाला, परमाणु ईंधन थोरियम घोटाला, आदर्श सोसायटी घोटाला, चावल निर्यात घोटाला, सेना के लिये मिलिट्री ट्रकों की खरीद घोटाला, मानवरहित विमान खरीद घोटाला, गोदावरी वेसिन में तेल की खोज में घोटाला, गोरश्कोव जहाज मूल्य निर्धारण में घोटाला, इंदिरा गांधी अन्तर्रा ट्रीय हवाई अड्डा निर्माण घोटाला, आईपीओ डी मैट घोटाला, रूसी पनडुब्बी घोटाला, मेगापावर प्रोजेक्ट घोटाला, एयर इंडिया सिक्योरिटी सिस्टम घोटाला, हाउसिंग लोन घोटाला, पंजाब सिटी सेन्टर परियोजना घोटाला, सत्यम घोटाला, ताज कैरीडोर घोटाला, हसन अली कर घोटाला, सेना राशन चोरी घोटाला, स्टेटबैंक आफ सौराष्ट्र घोटाला, झारखण्ड चिकित्सा उपकरण घोटाला, उड़ीसा खदान घोटाला, मधुकोड़ा खनन घोटाल, एस वैंड स्पेक्ट्रम घोटाला, आईपीएल क्रिकेट घोटाला अर्थात् यूपीए के शासन में

घोटालों का वट–वृक्ष खूब फला–फूला। जहॉ तक सरकार की छवि का प्रश्न है तो भ्रष्टाचार के इतने गेट खुल गये कि नामावली ही बन गयी– खेलगेट, कोलगेट और रेलगेट।[2]

हाय रे अस्तेय और अपरिग्रह की गांधी और गौतम की तपस्थली देवभूमि भारत। जमाने की कैसी नजर लग गयी। सब कुछ बदल सा गया। *'एकहुॅ होय तो ज्ञान सिखावहुॅ कूपहिं में ह्यॉ भॉग पड़ी है'* "हर शाख पे उल्लू बैठे हैं, अनजामए गुलिस्तां क्या होगा?" बापू के सपनों का स्वराज्य तो गरीबों का ही स्वराज्य बनकर रह गया है। कार्यपालिका एवं विधायिका सहित अर्थव्यवस्था के शीर्ष पर धनिक तन्त्र कुंडली मारकर बैठा है। और रियाया वेबसी के आंसू बहाती हुई हर पॉचवे वर्ष लोकतन्त्र के उत्सव में भूखे पेट रहकर सरकार के गठन का जनादेश दे देती है। आइये समस्या का कारण और समाधान देखें बापू की नजरों से .....

...

महात्मा गांधी नैतिक आदर्शवादी चिंतक हैं। उनका मानना है कि मनुष्य एक नैतिक प्राणी है। अपने मूलस्वरूप में वह पूतात्मा और दिव्यात्मा है परन्तु काम, क्रोध, लोभ, मोह का तीव्र झंझावत उसके विवेक सूर्य की प्रखर राश्मियों को निस्तेज कर देता है, परिणामस्वरूप वह आत्मस्वरूप को, ब्रह्मात्मभाव विस्मृत कर जाता है और बॉध लेता है स्वयंकोदेह और दैहिक सम्बन्धों से बने बुने मायावी मकड़जाल में,

नारि बिबस नर सकल गोसाईं।
नाचहिं नट मर्कट की नाई।।[3]

मनुष्य की इन्द्रियॉ अत्यन्त चंचल होती हैं। ये विषयभोग करने के लिये निरन्तर भागती रहती हैं। चाकि्चक्य पूर्ण जगत् अत्यन्त उद्दीपक और चित्ताकर्षक होता है। ऐसी स्थिति में यदि हम भोग की कामाग्नि पर नियन्त्रण नहीं कर पाये तो यह हमारे दिब्य व्यक्तित्व को झुलसाकर बदरंग तो कर ही देगी। "मनुष्य की वृत्तियॉ चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़–धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे–जैसे ज्यादा देते जायेंगे वैसे–वैसे ज्यादा मॉगता जाता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता।[4]

आज जीवन में चतुर्दिक व्याप्त दुःखों का मूल कारण लोभ और अनियन्त्रित भोग है। जो भोग और वासनायें भौतिक जगत में सृजन विकास का मूल कारण हैं वही अनियन्त्रित हो

जाने पर व्यक्ति और समाज के पतन का हेतु भी बन जाती हैं। इसीलिये तो भारतीय आर्य संस्कृति में धर्म नियन्त्रित काम को यज्ञतुल्य महत्ता प्रदान की गयी है। धर्मपोषित काम को ईश्वर रूप माना गया है।

"धर्माविरूद्धो भूतेषु कामोस्मि भरतर्षभ्।।[5]

आत्मस्वरूप का अज्ञान एवं विषयों की तरफ भागती मन की चंचल वृत्तियॉ भ्रष्टाचार के मूल में है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी मन को अत्यन्त चंचल मानते हुये उसकी गति को रोक पाना वायु से भी कठिन माना गया है–

'चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथिबलवद्दृढ़म। तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।[6]

मानवीय हृदय उदधि में भोगेच्छाओं का निरन्तर उमड़ता ज्वार और भोग भोग लेने के उपरान्त भी उनके तृप्त न होने का अंतहीन सिलसिला भ्रष्टाचार का दूसरा प्रधान कारण है। "भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसलिये हमारे पुरखों ने भोग की हद बॉध दी। बहुत सोचकर उन्होंने देखा कि सुख–दुख तो मन के कारण हैं। अमीर अपनी अमीरी की बजह से सुखी नहीं है। गरीब अपनी गरीबी के कारण दुःखी है। ऐसा देखकर पूर्वजों ने भोग की वासना छुड़वायी।[7]

विचित्र स्थिति है। एक तरफ मन सब कुछ का भोग कर लेना चाहता है और दूसरी तरफ भोगेच्छायें और वासनायें हैं, जो कभी शान्त होने का नाम नहीं लेतीं। वश इन्हीं दोनों के बीच मनुष्य यावज्जीवन संघर्ष करता रहता है और अतृप्ति की ज्वाला में जलते हुये एक दिन स्वअस्तित्व को समाप्त कर देता है। भर्तृहरि का स्वानुभूत सत्य तो देखिये–

तृष्णा न जीर्णाः,वयमेय जीर्णाः।
भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः।।

उल्लेखनीय है कि उक्त तथ्य व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सब पर समान रूपेण लागू होता है। हमारी आर्ष संस्कृति में अर्थ और काम को धर्म द्वारा नियन्त्रित रखा गया है। बापू का मन्तव्य है इससे भी बढ़कर आदर्शात्मक स्थिति वह है जहॉ अर्थ विद्या और नीति विद्या में कोई अन्तर नहीं रहता। इसी चिंतन के इर्द–गिर्द हमारी 'बिजनेस एथिक्स' केन्द्रित होनी चाहिये। "मैं अर्थविद्या और नीतिविद्या में कोई भेद नहीं करता। जिस अर्थविद्या से व्यक्ति या राष्ट्र के

नैतिक कल्याण को क्षति पहुॅचती हो उसे मैं अनीतिमय और पापपूर्ण कहूॅगा। उदाहरण के लिये जो अर्थविद्या किसी देश की किसी दूसरे देश का शोषण करने की अनुमति देती है वह अनैतिक है। जो मजदूरों को योग्य मेहनताना नहीं देते और उनके परिश्रम का शोषण करते हैं उनसे वस्तुयें खरीदना या उन वस्तुओं का उपयोग करना पापपूर्ण है।[8]

अस्तेय व अपरिग्रह वे महामन्त्र हैं जिनका पालन करके कोई भी समाज या राष्ट्र भ्रष्टाचार की समस्या से मुक्त हो सकता है। ये पूज्य बापू द्वारा प्रतिपादित एकादश व्रत के अंग है। ये वे नैतिक आचरण हैं, जिनको भारतवर्ष का प्रत्येक दर्शन (चार्वाक को छोड़कर) मोक्ष प्राप्ति हेतु अनिवार्य प्राथमिक शर्त के रूप में मान्यता देता है। अस्तेय का अर्थ चोरी न करने से है। अर्थात् पराई वस्तु के अपहरण का मन, वाणी और कर्म से परित्याग ही अस्तेय है। परन्तु इस व्रत को गांधी जी ने बहुत व्यापक परिधि में लिया है। उनका मानना है कि दूसरे के धन का अपहरण करना ही चोरी नहीं है वरन् लालच या स्वार्थ से अनावश्यक रूप से किसी वस्तु को रखना तथा अनावश्यक धन का संग्रह करना भी चोरी है। "मैं कहता हूॅ कि एक प्रकार से हम सभी लोग चोर हैं। यदि मैं कोई वस्तु लेता हूॅ जिसकी हमें अभी आवश्यकता नहीं है और उसे रखता हूॅ तो मैं उस वस्तु को किसी अन्य से चुराता हूॅ।[9]

अस्तेय के कई अंग हैं– 1.स्वयं चोरी करना, चोरी करने की प्रेरणा देना या चोरी करने की प्रशंसा करना। 2.चोरी का माल खरीदना। 3.किसी को भाव से कम या अधिक देना। 4.कम कीमत की वस्तु को अधिक में बेचना या अधिक दाम की वस्तु को कम दाम में खरीदना। 5. किसी असामान्य परिस्थिति में वस्तुओं के मूल्य में अनावश्यक वृद्धि कर देना।

अपरिग्रह का अर्थ है 'आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह न करना।' अस्तेय और अपरिग्रह में चोलीदामन का साथ है। दोनों परस्पर सहवर्ती हैं। पाश्चात्य भोगवाद से विरासत में मिली पूॅजीवादी व्यवस्था और लोभ वश अधिकाधिक अर्थसंचय की प्रवृत्ति ने जहॉ एक तरफ मानवीय आवश्यकताओं को असीमित कर दिया है। वहीं दूसरी तरफ उपभोग के दावानल को और हवा प्रदान की है। यही कारण है कि हम सन्मार्ग एवं सदाचरण से फिसलकर स्तेय की पंकिल गलियों में गिर पड़ते हैं। इस सम्बन्ध में बापू का मन्तव्य है– "एक हद तक शारीरिक सुविधा और आराम का होना जरूरी है लेकिन उस हद से आगे बढ़ने पर ये सुविधायें और

आराम सहायक बनने के बजाय हमारी आध्यात्मिक उन्नति में बाधक बन जाते हैं। इसीलिये बेहद जरूरतें बढ़ाने और उन्हें पूरा करने का आदर्श निराभ्रम और जाल है। मनुष्य को अपने शारीरिक सुखों और सांस्कृतिक सुविधाओं की ऐसे ढंग से व्यवस्था करनी चाहिये कि वे उसकी मानव सेवा में बाधक न बनें। मनुष्य की सारी शक्तियों का उपयोग मानव सेवा में ही होना चाहिये।[10]

सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच–समझकर अपनी इच्छा से उसे कम करना है। ज्यों–ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं त्यों–त्यों सच्चा सुख और सच्चा सन्तोष बढ़ता जाता है सेवा की शक्ति बढ़ती जाती है। अभ्यास से आदत डालने से आदमी अपनी जरूरतें घटा सकता है।[11]

अभी यहॉ पर एक प्रश्न अनुत्तरित है। आवश्यकता से अधिक पूर्व से संचित या अर्जित धन का क्या होगा? प्रत्युत्तर में गांधी का अंतस् मन चिल्ला पड़ता है– "बॉट दो उसे गरीबों और असहायों में" व्यक्ति को अपने धन का स्वामी नहीं बनना चाहिये। उसे अपने धन का ट्रस्टी बना देना चाहिये। इससे व्यक्ति के हृदय में अपने धन के प्रति मोह नहीं उत्पन्न होता तथा वह अपने धन का समाज कल्याण में व्यय करता है। "मैं किसी से उसकी सम्पत्ति छीनना नहीं चाहता, क्यों कि वैसा करूॅ तो मैं अहिंसा के नियम से च्युत हो जाऊॅगा। लेकिन यदि मुझे अपना जीवन नियम के अनुसार गढ़ना है तो मैं ऐसी कोई चीज अपने पास नहीं रख सकता जिसकी मुझे जरूरत नहीं। अतः हमें अपनी जरूरतों का नियमन करना चाहिये और स्वेच्छा पूर्वक अमुक अभाव भी सहना चाहिये, जिससे कि उन गरीबों का पालन–पोषण भी हो सके, उन्हें कपड़ा और अन्न मिल सके।[12]

स्पष्ट है जरूरतों का नियमन करना और दृढ़ता पूर्वक उसे व्यवहार में उतारना अत्यन्त कठिन है। यह भाषण या उपदेश का विषय न होकर वैयक्तिक साधना का विषय है। निरन्तर अभ्यास से इस दैवी प्रवृत्ति को अपने आचरण का अंग बनाया जा सकता है। किसी राजकीय नियम–कानून की जरूरत नहीं है और न ही किसी के प्रति जोर–जबरदस्ती करनी है। आवश्यकताओं को सीमित करने का मापदण्ड और निर्णय हमें अपने अन्तःकरण पर छोड़ देना

चाहिये। अन्तःकरण से विवेक का प्रकाश प्राप्त होते ही हमें किसी की परवाह किये बिना चुपचाप उस राह पर चल देना चाहिये– "सतां हि सन्देह पदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः।

परिग्रह वृत्ति के शमन और पूॅजी के सम वितरण हेतु ट्रस्टीशिप सिद्धान्त की व्याख्या करते–करते बापू गीतानायक कृष्ण की भूमिका में पहुॅच जाते हैं। विषय वासनाओं के आकर्षण से चंचल मन को कैसे रोका जाय? अर्जुन के इस प्रश्न पर गीता नायक कृष्ण उस रहस्य का उद्घाटन कर देते हैं जिसको आचरण में उतारकर विश्व समयता प्रेम, करूणा और उदारता पर आधारित समता मूलक समाज की स्थापना की तरफ अग्रसर हो सकती है–

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्। अभ्यासेन तु कौन्तेयः वैराग्येण च गृह्यते।[13]

परन्तु इसके लिये एक अहिंसक क्रान्ति पैदा करनी होगी। बीड़ा उठाना होगा समाज के नेतृत्व कर्ता–दार्शनिक, शिक्षक, राजनेताओं, समाज सेवियों और धर्माचार्यों को समूह मन बदलने का। जनमानस को प्रशिक्षित करने का। उन्हें प्रस्तुत करनी होगी "आचरण की सभ्यता" जिससे प्रेरणा प्राप्त कर जन सामान्य भी उस दिशा में अग्रसर हो सकें।

महात्मा गांधी का उक्त अर्थदर्शन भारतीय मनीषा के निम्न आदर्श का स्वातंत्रयोत्तर संस्करण प्रतीत होता है। जिसमें ऋषि निर्देश देता है "इस जगत में ममता ओर आसक्ति का त्याग करके केवल कर्तव्यपालन के लिये ही विषयों का यथाविधि उपभोग करो।"

ईसावास्यमिदंसर्वं यत्किंच जगत्यां जगत। तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।[14]

त्यागपूर्वक भोग के इस आदर्श को यदि प्रत्येक नागरिक अपने वैयक्तिक और सार्वजनिक जीवन का अंग बना ले तो भ्रष्टाचार का न केवल सदा सर्वदा के लिये अंत हो जायेगा बल्कि आज के भौतिक दाह–दग्ध विश्व में सुख शान्ति की रसवन्ती भी प्रवाहित की जा सकती है। परिणामस्वरूप प्राप्त नैतिक सांस्कृतिक सुव्यवस्था का परिणाम छान्दोग्य उपनिषद के अश्वपति के मुख से सुनिये–

न मे स्तेनो जनपदे..... मेरे राज्य में कोई चोर नहीं है। तथा न अदाता, न मद्यप, न अनाहिताग्नि, न अविद्वान और न परस्त्रीगामी ही है फिर कुलटा स्त्री कहॉ हो सकती है?।[15]

अन्यथा की स्थिति में भ्रष्टाचार और भोगवाद की प्रचण्ड ऑधी में धूलिलुंठित जगद्गुरू भारतवर्ष 'हम भ्रष्टन में भ्रष्ट' की स्थिति में पहुॅच जायेगा। कदाचारियों का शिरमौर बन जायेगा।

सन्दर्भ सूची

1- अखंण्ड ज्योति पृ ठ 5 जनवरी 2011प्रकाशक–अखंण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी मथुरा–281003

2- दैनिक समाचार पत्र 'आज' शनिवार 1 जून 2013

3- तुलसीदास–रामचरित मानस चौपाई 1 उत्तरकांड पृष्ठ 869 प्रकाशक 'गीताप्रेस गोरखपुर

4- महात्मा गांधी– मेरे सपनों का भारत पृष्ठ 50 सर्वसेवा संघ प्रकाशन राजघाट, वाराणसी (उ0प्र0)।

5- श्रीमद्भगवतगीता 7/11 गीता प्रेस गोरखपुर।

6- वही, 6/34

7- महात्मा गांधी– मेरे सपनों का भारत पृ050 सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट वाराणसी (उ0प्र0)

8- महात्मा गांधी– यंग इंडिया 13 अक्टूबर 1921

9- Speeches and writings of M.K. Gandhi madras 1934 page 284.

10- महात्मा गांधी– मेरे सपनों का भारत पृष्ठ 48 सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट वाराणसी (उ0प्र0)

11- महात्मा गांधी– मंगल प्रभात प्र0 6 पृ ठ 31 सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट वाराणसी(उ0प्र0)।

12- Speeches and writings of M.K. Gandhi madras page 384.

13- श्रीमदभगवद्गीता 6/35 गीताप्रेस गोरखपुर।

14- ईशावास्योपनिषद् मन्त्र 01 ईशादि नौ उपनिषद् गीता प्रेस गोरखपुर (उ0प्र0)

15- छान्दोग्य उपनिषद्– शांकरभाष्य, अध्याय 5 खण्ड 11 पृष्ठ 540 गीता प्रेस गोरखपुर।